श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका
શ્રી કૃષ્ણ પ્રણામી ધર્મ પત્રિકા

कर पकर बैठाए के, आवेस दियो मोहे अंग ।
ता दिन थे पसरी दया, पल पल चढते रंग ॥

दिसम्बर २०११
वर्ष ८३ श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर अंक १२
www.krishnapranami.org

श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके वयोवृद्ध एवं ज्ञानवृद्ध सन्त परम आदरणीय
श्री राधिकादासजी महाराजके साथ वार्तालाप करते हुए परम पूज्य आचार्य महाराजश्री ।

श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर जैतानाके
महंत श्री गुलाबदासजी महाराजकी समाधितथा श्रद्धांजलीके दृश्य ।

श्री निजानन्द आश्रम बुढ़ाना (मुजफ्फरनगर) का शिलान्यास समारोह (दि. ४-१२-२०११)।

श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका

संस्थापक : ब्रह्मलीन आचार्य श्री १०८ धनीदासजी महाराज

वि.सं : २०६८ निजानन्दाब्द : ४३० बुद्धजी शाका : ३३४

वर्ष : ८३ **दिसम्बर २०११** अंक : १२

मुद्रक, प्रकाशक एवं स्वामित्व } जगद्गुरु आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज

मुद्रण एवं प्रकाशन स्थल } श्री ५ नवतनपुरी धाम- खीजड़ा मन्दिर जामनगर - ३६१ ००१ (गुजरात) भारत

सम्पादक : स्वामी लक्ष्मण चैतन्य *एवं* श्री कनकराय व्यास

वार्षिक शुल्क रु. १००/- १५ वर्षीय शुल्क रु. १०००/-

पता : श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिका, श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर ३६१ ००१

फोन : (०२८८) २६७ २८२९फेक्स (०२८८) २५५ १३५३

E-mail : navtanpuri@gmail.com / navtanpuri@krishnapranami.org website : www.krishnapranami.org / www.krishnadhamusa.org

नूतनवर्षाभिनन्दन

अन्तर्राष्ट्रिय नूतन वर्ष २०१२ आप सभी सुन्दरसाथके लिए सुख, शान्ति एवं समृद्धि लेकर आए, सभी सुन्दरसाथ धर्ममें एवं अपने व्यवसायमें आगे बढ़ें तथा सबकी मनोकामनायें पूर्ण हों ऐसी शुभकामनाके साथ श्री राजजीके चरणोंमें प्रार्थना ।

(पत्रिका परिवार)

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म
(संक्षिप्त परिचय)
परम पूज्य आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज

धर्म

आज प्रत्येक मनुष्यको सुख, शान्ति एवं आनन्दकी चाहना है। इसके लिए वह धन, सम्पत्ति एवं प्रतिष्ठाके पीछे दौड़ रहा है। इनके कम या अधिक मात्रामें प्राप्त होने पर भी उसे सन्तोष नहीं अपितु अभावकी ही प्रतीति हो रही है। ऐसेमें परम शान्ति एवं आनन्दकी अनुभूतिके लिए उसे धर्मकी शरणमें जाना आवश्यक है। तभी सम्पत्ति एवं प्रतिष्ठाका होना सार्थक होगा अन्यथा इनसे मात्र अहंकारकी ही अभिवृद्धि होगी। इसलिए प्रत्येक व्यक्तिको धर्मका मर्म समझकर उसका अनुपालन करना चाहिए।

धर्म मनुष्य जीवनका अविभाज्य अंग है। प्रत्येक व्यक्ति व्यक्तिगत क्रियाकर्मसे लेकर पारिवारिक तथा लौकिक सम्बन्धोंमें जाने अनजाने धर्मका पालन अवश्य करता है। किन्तु धर्म मात्र कर्मकाण्ड अथवा पूजा पाठ पर्यन्त ही सीमित नहीं है अपितु इनके साथ साथ मानवीय व्यवहारमें कुशलता प्राप्तकर आत्मा एवं परमात्माका अनुभव करना धर्म कहलाता है। इसके लिए प्रत्येक व्यक्तिको मानवीय गुणोंका विकास करते हुए **मैं कौन हूँ, यह जगत क्या है, इसके रचयिता कौन हैं, वे कहाँ रहते हैं, उनके साथ मेरा सम्बन्ध है या नहीं ?** आदिकी भी जानकारी होनी चाहिए। इस जगतमें अवतरित महापुरुषोंने देश काल एवं परिस्थितिके अनुरूप धर्मके उपदेश दिये हैं। उनसे मनुष्यके व्यष्टिगत अथवा समष्टिगत उत्कर्षके साथ साथ स्व-स्वरूपकी अनुभूति पर्यन्तका मार्ग प्रशस्त हुआ है।

धर्म एक है

अनेक महापुरुषों द्वारा भिन्न भिन्न समयमें उपदिष्ट होने पर भी धर्म एक है जिससे मानव 'मानव' बनकर आत्मा एवं परमात्माकी पहचान प्राप्त कर सकता है । आत्मा सत्य है, सनातन है । परमात्मा भी सत्य हैं, सनातन हैं । आत्मा और परमात्माका सम्बन्ध भी सत्य है, सनातन है । इसलिये आत्मा–परमात्मा तथा उनके शाश्वत सनातन सम्बन्धकी पहचान करवाने वाला धर्म भी सनातन कहलाता है। धर्मके इस सनातन सिद्धान्तको समझानेके लिये भिन्न–भिन्न समयमें अनेक महापुरुषोंका अवतरण हुआ है । उनकी उपदेश शैलीकी विविधताके कारण आज इस जगतमें विभिन्न मत–मतान्तर एवं सम्प्रदाय अस्तित्त्वमें हैं । किन्तु इन सभीका उद्देश्य मनुष्य जीवनका उत्कर्ष है। इनमें से कतिपय सम्प्रदाय मानवताका उपदेश देते हैं तो कतिपय मानवताके उपदेशके साथ–साथ आत्मा एवं परमात्माकी पहचानका मार्ग प्रशस्त करते हैं ।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्म

धर्मके सनातन तथा शाश्वत सिद्धान्तोंको सहजरूपसे हृदयङ्गम करवानेके लिए श्री कृष्ण प्रणामी धर्म सर्वप्रथम मानवको मानवीय मूल्योंकी पहचान करवाकर जीवनका परम ध्येय(लक्ष्य) आत्मा तथा परमात्माकी पहचानका मार्ग प्रशस्त करता है। अपने(निज) आनन्द स्वरूपकी अनुभूति करानेवाला होनेसे इसे निजानन्द सम्प्रदाय भी कहा गया है ।

पूर्णब्रह्म परमात्मा एक हैं। वे क्षर जगत तथा अक्षर भूमिकासे परे होनेसे अक्षरातीत कहलाते हैं । सम्पूर्ण चेतनाओंके केन्द्रविन्दु होनेसे उन्हें श्री कृष्ण तथा विश्वब्रह्माण्डके स्वामी (एक मात्र राजा) होनेके कारण श्री राज नामसे पुकारा गया है । ऐसे पूर्णब्रह्म परमात्माको आत्माके स्वामी मानकर उनके चरणोंमें अनन्य भावसे प्रणाम करनेके कारण निजानन्द सम्प्रदाय होते हुए भी यह श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके नामसे प्रसिद्ध हुआ है।

निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराज

इस सम्प्रदायके आदि आचार्य निजानन्दाचार्य श्रीदेवचन्द्रजी महाराज हैं। उनका जन्म इस्वी सन् १५८१ में मारवाड़ प्रदेशमें हुआ था। बाल्यकालसे ही उनमें धर्मके प्रति अभिरुचि थी। वे साधु-सन्तों तथा मन्दिरके पुजारियोंसे धर्मचर्चा सुनकर मग्न रहते थे। सोलह वर्षकी आयुमें गृहत्याग कर वे परम सत्यकी खोजमें निकले। उनके मनमें **मैं कौन हूँ, यह दृश्यमान जगत क्या है, इसके रचयिता परमात्मा कहाँ रहते हैं, उनके साथ मेरा सम्बन्ध है या नहीं ?** आदि जिज्ञासाएँ थी। इन जिज्ञासाओंको शान्त करनेके लिए वे नौ वर्ष पर्यन्त कच्छके विभिन्न धर्मस्थानोंमें विचरण कर सौराष्ट्र(गुजरात)की पवित्र भूमि जामनगर पहुँचे।

परमात्माका साक्षात्कार : जामनगर पहुँचकर उन्होंने विभिन्न धर्मस्थानोंमें खोज की। अन्तमें श्यामजीके मन्दिरमें कानजी भट्ट नामके विद्वानसे श्रीमद्भागवतकी कथा श्रवण करने लगे। इस प्रकार कथा श्रवण करते हुए चौदह वर्ष व्यतीत हुए। बीच-बीचमें अनेक कठियाइयाँ आईं तथापि वे उनकी अवगणना करते हुए आगे बढ़े। एक दिन कथा सुनते हुए प्रेममें इतने मग्न हो गये कि उसी समय पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णजीने उनको साक्षात् दर्शन दिए एवं मनकी सम्पूर्ण जिज्ञासाओंको शान्त किया। उन्होंने पातालसे परमधाम पर्यन्तका ज्ञान देकर ब्रह्मधाम-परमधामकी लीलाओंका रहस्य समझाया और कहा, **'परमधामकी ब्रह्मात्माएँ नश्वर जगतका खेल देखनेके लिए सुरताके रूपमें आकर इस जगतके खेलमें भूल गई हैं। उनको जागृत कर परमधामका अनुभव करवानेके लिए तारतम ज्ञानके साथ-साथ तारतम मन्त्र प्रदान कर मैं तुम्हें यह दायित्व सौंपता हूँ।'** ऐसा कहकर श्री कृष्णजीने उनको षोडशाक्षर तारतम मन्त्र प्रदान किया एवं स्वयं उनके हृदयमें विराजमान हुए।

धर्मपीठकी स्थापना : इस प्रकार ब्रह्मसाक्षात्कार एवं ब्रह्मज्ञानकी

प्राप्ति होनेपर निजानन्दाचार्य श्रीदेवचन्द्रजी महाराजने ब्रह्मात्माओंको जागृत करना आरम्भ किया और अपने वरदहस्तसे इस्वी सन् १६३० में धर्मपीठकी स्थापना कर उसे **'नवनतपुरी धाम'** नामाभिधान किया । दिन प्रतिदिन सत्सङ्ग चर्चामें अभिवृद्धि होती गई । अनेक आत्माओंमें जागृति आयी । ऐसी महान् आत्माओंमें जामनगरके तत्कालीन मन्त्री केशवरायके सुपुत्र श्री मेहेराजका स्थान सर्वोच्च है । वे कालान्तरमें महामति प्राणनाथके नामसे प्रसिद्ध हुए ।

महामति श्री प्राणनाथजी

महामति श्री प्राणनाथजीका जन्म इस्वी सन् १६१८ में जामनगर, गुजरातमें हुआ । वे मात्र बारह वर्षकी आयुमें निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजीके मेहराज शिष्य बने एवं अल्पकालमें ही ज्ञान तथा साधनाके द्वारा आत्माको जागृत कर उन्होंने ब्रह्मज्ञानके प्रचार-प्रसार तथा ब्रह्मात्माओंकी जागृतिका उत्तराधिकार प्राप्त किया । उन्होंने सदैव अपने सद्गुरुकी आज्ञामें रहकर कार्य किया तथा उनके धामगमन(देहविलय)के पश्चात् ब्रह्मज्ञानके प्रचार-प्रसारके लिए देश-विदेशकी यात्रा की । इसी यात्रामें उन्होंने पन्नामें धर्मपीठकी स्थापना की । सूरतमें भी सत्रह महीने पर्यन्त रहकर धर्मचर्चा की । उनके ज्ञानसे प्रभावित होकर अनेक दिग्गज विद्वान उनके शिष्य बने । कालान्तरमें वहाँ भी धर्मपीठकी स्थापना हुई । इस प्रकार जामनगरमें नवतनपुरी धाम, सुरतमें महामंगलपुरी धाम तथा पन्नामें पद्मावतीपुरी धाम; ये तीनों स्थान तीर्थके रूपमें प्रसिद्ध हुए । महामति श्रीप्राणनाथजीने देश-विदेशमें परिभ्रमण करते हुए अनेक राजा, महाराजाओंको मुगल शासकोंके अत्याचारसे पीडित हिन्दू प्रजाकी पीडाको दूर करनेके लिए मुगल शासकोंके विरुद्ध तैयार किया । उन्होंने हिन्दू धर्ममें प्रचलित बाह्यआडम्बर एवं रूढ़िवादको दूर कर स्वस्थ, प्रबुद्ध एवं जागृत समाजके निर्माणका प्रयत्न किया एवं विभिन्न देवी-देवताओं तथा अवतारोंकी मान्यताओंको स्पष्ट करते हुए परम सत्यके रूपमें एक परब्रह्म परमात्माकी बात कही । महामति श्री प्राणनाथजी द्वारा

प्रसारित श्री कृष्ण प्रणामी धर्मका विस्तार उनके बाद भी बढ़ता गया। आज भारतके प्राय: सभी प्रान्तोंमें तथा भारतसे बाहर नेपाल एवं भूटानमें मिलाकर ८०० से अधिक मन्दिर तथा आध्यात्मिक एवं सामाजिक केन्द्र ब्रह्मज्ञान तथा संस्कृतिके प्रचार–प्रसारके लिए विशेष कार्य कर रहे हैं। अमेरिका, यूरोप तथा केनेडामें भी मन्दिर तथा धर्मके केन्द्र कार्यरत हैं।

तारतम सागर : निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराजके सिद्धान्तों तथा ब्रह्मज्ञानका अनुसरण कर उनके प्रमुख शिष्य महामति श्री प्राणनाथजीने उनकी आज्ञासे देश–विदेशमें भ्रमण करते हुए धर्मका प्रचार–प्रसार किया। उस समय उन्होंने अपने उपदेशोंसे अनेक आत्माओंको जागृत किया। उन उपदेशोंका संग्रह **तारतम सागर** नामसे प्रसिद्ध है जिसमें धर्मके सम्पूर्ण सिद्धान्त तथा दर्शन समाविष्ट हैं। निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी तथा महामति श्री प्राणनाथजीके जीवन चरित्रके ऐतिहासिक ग्रन्थको वीतक कहा जाता है। सम्प्रदायमें आज अनेक वीतक पद्य तथा गद्यके रूपमें उपलब्ध हैं। श्री तारतम सागर ग्रन्थ रास, प्रकाश, षट्ऋतु, कलश, सनन्ध, किरन्तन, खुलासा, खिलवत, परिक्रमा, सागर, सिनगार, सिन्धी, मारफत सागर, कयामतनामा प्रभृति चौदह अवान्तर ग्रन्थोंका संग्रह है। इसमें कुल १८७५८ चौपाईयाँ संकलित हैं। इस विशालकाय ग्रन्थमें धर्मके सिद्धान्त, दर्शन, साधना पद्धति तथा मान्यताके साथ–साथ परब्रह्म परमात्माके धाम, स्वरूप, नाम एवं लीलाका विशद वर्णन है। धर्ममें प्रचलित विभिन्न मत–मतान्तर तथा बाह्य आडम्बरका उल्लेख करते हुए उनसे मुक्त होकर धर्मके शुद्ध स्वरूपके अनुसरणकी प्रक्रिया तथा एक उदात्त, सुशिक्षित तथा स्वस्थ समाजकी रचनाकी बात इसमें कही गयी है।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें निर्दिष्ट तत्त्वज्ञान

श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें तारतम ज्ञान एवं प्रेमलक्षणा भक्तिका विशेष महत्त्व बताया गया है। तारतम ज्ञानके द्वारा आत्मा, परमात्मा एवं परमधामकी पहचान होती है और प्रेमलक्षणा भक्तिके द्वारा उनका अनुभव

होता है । तारतम ज्ञान यथार्थ ज्ञान है । जगतकी नश्वरता, पातालसे सतलोक पर्यन्तकी परिवर्तनशीलता सहित समग्र क्षर ब्रह्माण्डकी जानकारीके साथ-साथ अविनाशी ब्रह्मधामका तारतम्य यथार्थ रूपमें समझानेके कारण इसे तारतम ज्ञान कहा गया है ।

यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एवं इसके संचालनमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानेवाली विभिन्न विभूतियाँ-देवीदेवताओंसे लेकर भगवान नारायण पर्यन्त सभी व्यष्टि-समष्टि परमात्माके क्षर स्वरूपमें आते हैं । यह सम्पूर्ण ब्रह्म क्षर कहलाता है ऐसे अनन्त ब्रह्माण्डोंका सर्जन करनेवाला परमात्माका दूसरा स्वरूप कार्यब्रह्म अथवा अक्षर ब्रह्म कहलाता है । जिसमें प्रणव ब्रह्म, गोलोक धाम, केवलब्रह्म, सत्स्वरूप आदि सभी समाविष्ट हैं । अक्षरब्रह्मको उनके कार्यके लिये प्रेरणा एवं निर्देशन प्रदान करनेवाला परमात्माका मूल स्वरूप है वह अक्षरसे भी उत्कृष्ट '**अक्षरात् परतः परः**' होनेसे उसे अक्षरातीत, उत्तम पुरुष, परम सत्य आदि शब्दोंके द्वारा निर्दिष्ट किया है । सम्प्रदायमें उनको ही श्री कृष्णजी अथवा श्री राजजी नामसे पुकारा जाता है ।

ब्रह्मके तीन स्वरूपकी भाँति चेतना (जीव) के भी तीन स्वरूप कहे गये हैं; वे हैं जीवसृष्टि, ईश्वरीसृष्टि एवं ब्रह्मसृष्टि । जीवसृष्टिका कार्यक्षेत्र क्षर जगत् होनेसे उनका मुख्य सम्बन्ध भी क्षर ब्रह्म अर्थात् भगवान नारायण एवं अन्य क्षर विभूतियोंके साथ है । ईश्वरीसृष्टिका सम्बन्ध कार्यब्रह्म अक्षरब्रह्मसे है और ब्रह्मसृष्टिका मूल सम्बन्ध अक्षरातीत ब्रह्म श्री कृष्णजी अर्थात् श्री राजजीके साथ है । जीवसृष्टि नश्वर खेलके मुख्य पात्र हैं । ब्रह्मात्माएँ अथवा ईश्वरी आत्मायें जगतका खेल देखनेके लिए हैं । जीवसृष्टिको नश्वर जगत प्रिय लगता है । उनको सामान्यतया परमात्माके प्रति लेशमात्र भी रुचि नहीं होती है । जबकि ब्रह्मसृष्टि एवं ईश्वरीसृष्टि यात्रियोंकी भाँति जगतकी यात्राका आनन्द लेती हैं । परन्तु वे भी माया-मोहके प्रभावमें आकर स्वयंको, अपने स्वामी परमात्मा एवं अपने धाम परमधामको भूल गयीं । उन्हें जागृत

करनेके लिए तारतम ज्ञानका अवतरण हुआ है । इसके द्वारा जागृत होने पर हृदयमें प्रेमभाव प्रगट होगा । प्रेमसे परमात्माका अनुभव होगा । प्रेम ब्रह्मका ही स्वरूप है । परमात्माके प्रति अनन्य भावको पतिव्रता भाव कहा गया है । ईश्वरीसृष्टि ब्रह्मकी ऐश्वर्य लीलाके पात्र हैं एवं ब्रह्मसृष्टि प्रेम लीलाके पात्र हैं । उन्हें नश्वर जगतका खेल देखते हुए जलकमलवत् रहना होता है । किन्तु जागृत् होने पर ही यह संभव है । इसलिए श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें आत्मजागृति पर विशेष बल दिया गया है ।

धार्मिक स्वरूप : श्री कृष्ण प्रणामी धर्ममें दीक्षित व्यक्तिको सुन्दरसाथ कहा जाता है । पूजा, पाठ, ध्यान, चिन्तन, सत्संग आदि उनका नित्यक्रम है । सुन्दरसाथकी संख्या एवं उनकी भौतिक क्षमताके आधार पर विभिन्न क्षेत्रोंमें श्रीकृष्ण प्रणामी मन्दिरोंका निर्माण हुआ है । ऐसे सार्वजनिक मन्दिर एवं गृह मन्दिरमें सिंहासन पर पूर्णब्रह्म परमात्माके प्रतीकके रूपमें उनका वाङ्मय स्वरूप श्री तारतम सागर ग्रन्थको पधराया जाता है । इस वाङ्मय स्वरूपको वाघा-वस्त्र, मुकुट, वंशी, हार आदि द्वारा सजाया जाता है । शास्त्रोंमें वर्णित अष्टविग्रह मध्ये वाङ्मय-विग्रहकी उपासना सर्वश्रेष्ठ मानी गयी है । वाङ्मय स्वरूपकी पूजा ज्ञानकी पूजा है । इसलिए जन्म-मरणादि विभिन्न प्रसंगोंमें तारतम सागरका पाठ पारायण किया करते हैं ।

सुन्दरसाथ नियमित रूपसे दर्शनके लिए मन्दिर जाता है और मन्दिरमें पधराये हुए श्री तारतम सागरकी न्यूनतम पाँच चौपाइयोंका पाठ करना अपना कर्तव्य समझता है । अपनी अनुकूलतानुसार दैनिक वाणी चर्चा अथवा साप्ताहिक एवं पाक्षिक सत्संगमें सम्मिलित होनेके लिए भी लालायित रहता है । तीर्थ स्थानोंके साथ साथ विभिन्न क्षेत्रोंके मन्दिरोंमें भी विविध पर्वों पर उत्सव मनाये जाते हैं ।

विशेषता : सुन्दरसाथकी मुख्य विशेषता यह है कि परस्पर मिलने पर वर्ण-वर्ग छोटे बड़े आदिका भेदभाव न रखकर हाथ जोड़कर एक दूसरेको प्रणाम करते हैं । अभिवादन एवं प्रति-अभिवादन दोनोंमें प्रणाम

शब्दका प्रयोग होता है । इस सम्प्रदायमें धुम्रपान, मद्यपान, मांसाहार आदिको सर्वथा त्याज्य माना गया है एवं दीर्घ कर्मकाण्डकी जालसे ऊपर उठकर प्रेमलक्षणा भक्ति द्वारा पूर्णब्रह्म परमात्माकी उपासना की जाती है । महात्माओंके पार्थिव देहको दाह संस्कारकी अपेक्षा मृत्तिका संस्कार अथवा समाधि दी जाती है ताकि उनके शिष्य वहाँ पर एकत्र होकर प्रार्थना कर सकें ।

समाजोपयोगी कार्य : श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके अनुयायी समग्र भारत, नेपाल एवं विश्वके विभिन्न देशोंमें फैले हुए हैं । आज ८०० से अधिक मन्दिर तथा सेवाकेन्द्र धार्मिक तथा समाजोपयोगी कार्य कर रहे हैं । उनके धार्मिक कार्यक्रमोंके अतिरिक्त विशेषरूपसे शिक्षा एवं स्वास्थ्य उपाचार मुख्य हैं । प्राथमिक विद्यालयसे लेकर महाविद्यालय एवं शोध संस्थान विभिन्न क्षेत्रोंमें हैं । प्राकृतिक प्रकोप (भूकंप, बाढ़, चक्रवात, सूखा आदि) के समय सहाय एवं पुनर्वासके लिए भी प्रणामी संस्थाओंका योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है । विभिन्न संस्थाओंमें गौशालायें हैं और आश्रमोंमें असहाय एवं अनाथ बालकबालिकाओंकी सेवा होती है ।

वर्तमान स्वरूप : देश विदेशमें फैले हुए ८०० केन्द्रोंमें जामनगर, सूरत एवं पन्ना स्थित तीन पुरियोंके अतिरिक्त अनेक तपस्वी सन्तोंने विभिन्न क्षेत्रोंमें धर्मस्थानोंकी स्थापना की है उनमें आदरणीय स्थान हैं हरियाणामें करनाल, भिवानी, उत्तरप्रदेशमें शेरपुर, मटीहारी, मलीहाबाद, बिहारमें गंगापुर, पं. बंगालमें कालिम्पोंग, गुजरातमें भरोड़ा आदि विशेष हैं ।

इस प्रकार परब्रह्म परमात्माकी भक्तिके साथ प्रेम, शान्ति, एकता और सद्भावनाका सन्देश देनेवाला यह धर्म निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराज एवं महामति श्री प्राणनाथजीके निर्देशनोंको चरितार्थ करता हुआ विभिन्न क्षेत्रोंमें फैला है ।

दिव्य वाणीसे परमधाम

ब्रह्मलीन आचार्य श्री १०८ धर्मदासजी महाराज

सज्जनवृन्द ! शास्त्र पुराणोंके मनन करनेपर यह पाया जाता है कि मनुष्य मात्र मोक्षके अधिकारी हैं । परन्तु मोक्ष किस रूपसे कहाँ और कैसे मिलता है इसको समझानेके लिए ही श्रुति, स्मृति, पुराण आदि इस भूतल पर महापुरुषोंद्वारा प्रकट हुए हैं । इस भूमण्डलमें अनेक प्रकारके अवतार तथा ऋषि महर्षि एवं महापुरुष प्रकट हुए हैं । जिनकी सिद्धियाँ पृथक्–पृथक् हैं । विशेष विचार करनेपर पाया जाता है कि प्रायः सर्वका ही मतैक्य है, परन्तु यह महान गूढ़ गम्भीर विषय होनेसे सर्वके हस्तगत नहीं आता है । इसी कारणसे वास्तविक तत्त्व सर्व साधारण जनके समझमें नहीं आता है । दिव्य आत्मायें जब इस संसारमें आती हैं तो सर्वके लिए मुक्तिका दरवाजा खुल जाता है । ऐसे महापुरुषोंमें निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराज एवं स्वामी श्री प्राणनाथजी दिव्य ब्रह्मपुर परब्रह्मधामसे इस भूतलपर अवतरित हुए हैं जिन्होंने ब्रह्म, ईश्वरीय एवं जीव तीनों ही सृष्टिको मुक्ति धामका दरवाजा खोल दिया है । जो जिज्ञासु पवित्र आत्मायें हैं, उन्हें ये उपरोक्त साधन सुलभतासे प्राप्त होते हैं । श्री प्राणनाथजी कथित ब्रह्मवाणी खुलासा ग्रन्थमें इस प्रकार लिखा है ।

बुध निहकलंक आए के, मार कलजुग करसी दूर ।
असुराई सबों मेट के, देसी मुक्त हजूर ।।
विजयाभिनन्द बुद्धजी, लिखी यही सरत ।
ब्रह्मसृष्टि जाहेर होए के, सबको देसि मुगत ।।

शास्त्र पुराणोंमें इस प्रकारके कथन हैं कि इस भूमि पर परमात्मा बुद्ध निष्कलंक अवतार धारण करेंगे । मनुष्यके अन्दर कलिकालके दूषित वातावरणको दूर कर आसुरी भावोंको मेटकर शुद्ध भावना भर देंगे और प्रेमलक्षणा भक्तिके पथपर आरूढ़ आत्माओंको दिव्य परमधाममें मुक्ति प्रदान करेंगे । विजयाभिनन्द बुद्धनिष्कलंक अवतार सर्व सृष्टिके जीवोंका कल्याण करेंगे । इस प्रकारकी अनेक साक्षियाँ,

ब्रह्म वाणीमें लिखी गई हैं । वहाँपर यह भी लिखा है कि ब्रह्ममुनि प्रकट होकर सबको मुक्ति प्रदान करेंगे ।

कलेरन्ते बुद्धरूपी जनानामनुकम्पया ।
अवतीर्यासिना ज्ञानरूपेणाच्छिद्यसंशयम् ।।
धामस्थाननुमन्त्रयादौ तेभ्यस्तत्वमुदीर्य च ।
अथ तांश्च समादाय गमिष्यन्ति निजालयम् ।।

(पद्मपुराण)

कलियुगके अन्त फलके निमित्त जीवोंपर करुणाकर परमात्मा निष्कलंक बुद्ध नामसे प्रकट होंगे । जो ज्ञानरूपी तलवारसे निजजनों तथा सर्व जीवोंके संशयको छेदन करेंगे एवं निजधाम वासियोंको बुलाकर तत्त्व ज्ञान देंगे और उन्हें लेकर अपने धामको जायेंगे ।

विजया अभिनन्द बुधजी, और निहकलंक अवतार ।
कायम करसी सब दुनियां, त्रैगुनको पोहोंचावे पार ।।
अखण्ड वतन इत जाहेर, और जाहेर सुख ब्रह्म ।
बुद्धविजयाभिनन्दन जाहेर, जाहेर काटे दुनिया के करम ।।
रसम करम कांड की, हुती एते दिन ।
अब इलम बुधजीय के, दई सबों प्रेम लक्षन ।।
पेहेचान बुध नेहेकलंक, और पेहेचान ब्रह्म सृष्ट ।
याकी अस्तुत निगम करे, किन सुन्या न देख्या दृष्ट ।।

शास्त्रोंमें ऐसा भी उल्लेख है कि विजयाभिनन्द बुद्धजी और निष्कलंक अवतार इस भूतल पर अवतरित होंगे । वे अपनी विशुद्ध बुद्धिके द्वारा सर्व दुनियांको अखण्ड मुक्तिमें कायम करेंगे, इतना ही नहीं त्रिगुण स्वरूप ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि देवोंको भी पार पहुँचाएँगे ।

यह भी लिखा है कि विजयाभिनन्द बुद्धजी इस संसारमें आकर अखण्ड वतन परमधामको जाहेर करेंगे और परब्रह्म परमात्माका सुख इस दुनियांमें बतायेंगे । कर्मकाण्डमें फंसी हुई दुनियांके अशुद्ध कर्मको काट कर उन्हें शुद्ध भूमिकामें पहुँचाएंगे ।

आज तक दुनियांमें कर्मकाण्डकी परिपाटी ही चल रही थी। बुद्धिजीने प्रकट होकर इस परिपाटीको मिटा दिया। बुद्धजीके द्वारा परमधामसे दुनियांमें अखण्ड ज्ञान आनेका कारण समग्र विश्वके प्राणियोंको प्रेम लक्षणा भक्ति प्रदान कर विशुद्ध मार्ग बताया है।

हे जिज्ञासु पुरुषो ! मुक्तिकी इच्छावालों !! बुद्ध निष्कलंक अवतारकी पहिचान करो । इतना ही नहीं और भी अखण्ड वतनसे आई हुई ब्रह्मवासनाओंको भी पहिचानो क्योंकि शास्वती समा इन ब्रह्मसृष्टियोंकी तो निगम(वेद) भी स्तुति कर रहे हैं। वेद कहते हैं कि आज तक ब्रह्ममुनियोंकी वाणीको किसीने सुना नहीं और उन्हें अपनी दृष्टिसे भी देखी नहीं है।

स्वकृतविचित्रयोनिषु विशन्निव हेतुतया ,
तरतमतश्चकारस्यनलवत् स्वकृतानुकृतिः ।
अथ वितथास्वमूष्वविनथं तव धाम समं ,
विरजधियोऽन्वयन्त्यभिविपण्यव एकरसम् ॥

(भा. १०/८६/१९)

श्रुतियां स्तुति करती हैं, 'हे परमात्मा ! कार्य कारणसे स्वकृत विचित्र योनियोंमें जड़, चेतन नानारूप प्राणियोंमें प्रविष्ट आप अग्निकी भांति अर्थात् जैसे एक ही अग्निकांडके आकार भेदसे अनेक रूपमें कहीं टेढ़ा कहीं नीचा तो कहीं विचित्र रूपमें दृष्टिगोचर होता है उसी प्रकार स्वनिर्मित अनेक आकृतियोंमें अन्तर्यामी रूपसे नाना भांति सब प्रकारसे आप ही भास रहे हैं परन्तु इस तत्त्वको तारतमसे ही जाना जा सकता है। हे प्रभो ! मिथ्याभूत नश्वर इन नाना स्वरूपोंके सिमट जानेपर भी अवितथ अविनाशी एक रस रहनेवाले आपके धामको कोई निर्मल बुद्धिवाले ही जान सकते हैं और स्तुतिकर प्राप्त होते हैं।'

दिव्यो ह्यमूर्तः पुरुषः, स बाह्याभ्यन्तरो ह्यजः ।
अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो, ह्यक्षरात्परतः परः ॥

दिव्य स्वरूप प्राकृत मूर्ति रहित पुरुषाकार वह परमात्मा बाह्य चतुष्पाद विभूति अक्षर तथा आभ्यान्तर स्वामिनी आदि शक्ति समूहसे भी

श्रेष्ठ है। वे निश्चय ही जन्म रहित अविनाशी प्राकृत प्राण रहित, प्राकृत मन रहित निर्मलस्वरूप अव्याकृतादिसे परे जो अक्षर हैं, उससे भी परे होनेसे वे परमात्मा अक्षरातीत ब्रह्म हैं। ऐसे अक्षरातीत ब्रह्मको और उनकी अंगनाओंकी वेद स्तुति करते हैं।

वेदांत गीता भागवत, दैयां इसारतां खोल।
मगज माएने जाहेर किए, माहे गुझ हते जो बोल ॥
मुक्त दइ त्रगुन फिरस्ते, जगाए नूर अक्षर।
रूहें ब्रह्म सृष्ट जागते, सुख पायो सचराचर ॥

(खुलासा)

वेदान्त दर्शन वेदके गुह्य तत्त्वोंको एवं शंका कुशंकाओंको दूर करनेवाला वेदका निचोड़ कहा जाता है। गीता, भक्ति और ज्ञानका भंडार अर्थात् समग्र महाभारत ग्रन्थका सारभूत निचोड़ है। श्रीमद् भागवत वेदोंका पका हुआ सारभूत फल है। ऐसे गूढ़ उपरोक्त तीनों ग्रंथोंका सारभूत श्री कृष्ण तत्त्व है, इस तत्त्वको श्री प्राणनाथ महाप्रभुने स्पष्ट रूपसे खोल दिया है अर्थात् सर्वको ज्ञान दिया है उपरोक्त ग्रन्थोंमें रहा हुआ सार निकालकर श्री तारतम सागरमें रख दिया है। इनको 'अमर बोल' कह सकते हैं।

बुद्धजीके ज्ञानने अक्षर ब्रह्म सहित त्रिगुण फरिस्तोंको जगाकर सब जीवोंको मुक्ति प्रदान की। परमधामकी ब्रह्मात्माओंको जागृत करते हुए चर अचर विश्वके समग्र जड़ चेतनात्मक थावर–जंगम सर्वको मुक्ति प्रदान की।

वाचकवृन्द ! इस लेखको खूब गम्भीरतासे वांचकर आत्मसात करें। जब तक मनुष्यको आत्मानन्दका अनुभव नहीं होता है, तब तक वह अनेक प्रकारके दुःख सहन करता है। सुन्दरसाथजी ! ध्यानपूर्वक विचार करें। यह शरीर तुम नहीं हो तुम तो आत्मा हो। आत्माका अनुभव ही स्वस्वरूपका अनुभव है। विषयानन्द मृत्यु और अधोगति है। श्रीजी महाराजके उपदेशसे जागृत होकर आत्माके अनुभव द्वारा परमधाममें विचरना है और अपनी सुरताको हमेशा मूल मिलावामें रखना है।

जीवन धर्म एवं व्यवहार

प्रकाश चन्द्र शास्त्री, श्री कृष्ण प्रणामी राज सेवा संस्थान, उदयपुर

जीवका शरीरके साथ जब तक सम्बन्ध बना रहे तब तककी अवस्थाको जीवन कहा गया है। जब तक ब्रह्माण्डका अस्तित्त्व बना रहेगा तब तक जीवन है। शरीरमें जीवके अभावको मृत्यु कहा जाता है। महामति प्राणनाथजीके कथन अनुसार मूल वतन परमधाममें आत्मा और परमात्माका नित्य व अविनाशी सम्बन्ध जीवन कहलाता है,

हा रे सैया यह है अपना जीवन, सखि मेरी जो है मूल वतन ।

(तारतम वाणी)

इसीके आधार पर नश्वर जगतमें भी परमात्माका अंश जीव जब तक नश्वर देह धारण करता है तब तक चेतन जीवके साथ सम्बन्ध रहनेसे नश्वर तनका भी जीवन माना गया है।

मानव जीवनमें मधुर सम्बन्ध स्थापित करने वाला जीवंत तत्त्व धर्म है। धर्मसे ही जीवनकी रक्षा होती है। जो व्यक्ति धर्मकी रक्षा करता है धर्म उसकी रक्षा करता है, **धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः** ।

मानव जीवनके सर्वतोमुखी विकासमें धर्मकी अहम भूमिका है। अतः मानव शरीर ही नहीं प्राणीमात्रके अंग प्रत्यांगमें सूक्ष्म रूपसे धर्म ओतप्रोत है। जीवनकी सर्व व्यापिनी प्रज्ञा शक्तिका विकास धर्मके शुभ आचरणसे ही सम्भव है। सत्य जीवनका यथार्थ है। सत्यके पूर्ण स्वरूपकी पहिचान धर्मसे ही सम्भव है। धर्म सत्यकी अनुभूतिका सुगम साधन है। धर्म पर आधारित जीवन ही वास्तविक जीवन है।

मानव देह प्रकृतिकी सर्वोत्कृष्ट कृति है। यही अखण्ड फल प्राप्तिका अचूक व बहुमूल्य साधन है। इस रत्नको वृथा गवाँना उचित नहीं। महामति कहते हैं,

मानषे देह अखण्ड फल पाइये, सो क्यों पायके वृथा गमाईये ।

(तारतम वाणी)

मानव ही धर्मके मूल स्वरूपकी तलस्पर्शी खोज कर सकता है। वह स्वभावसे ही प्रिय, भावुक, दयालु एवं संवेदनशील है। उसके हृदयमंदिरमें क्षमा, अनुराग, आकांक्षा, दया एवं प्रेम आदि विशिष्ट गुणोंका अक्षय भण्डार है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या आदि भी मानवके नैसर्गिक गुण हैं। इन सभी गुणों पर विजय प्राप्त करनेके लिए एक मात्र सहारा धर्म है। मूल रूपमें धर्मका स्वरूप शाश्वत् सनातन है परन्तु लौकिक व्यवहारमें इसके कई रूप दिखाई देते हैं। जैसे,

वर्णधर्म, आश्रमधर्म, गुण धर्म, निमित्त धर्म, साधारण धर्म आदि आदि लौकिक व्यवहारमें कर्तव्य, अनुशासन एवं प्रामाणिकताको भी धर्म कहा गया है। व्यवहारमें धर्म सत्यका ही बाह्य कलेवर है परन्तु मूलमें उसका शाश्वत् स्वरूप है। सत्यमें विधि निषेध नहीं होते हैं। लौकिक धर्ममें विधि निषेधका विशेष महत्त्व है। देश, काल, विविध परिस्थितियों एवं जातियोंमें अलग-अलग मान्यता या रूप दिखता हुआ भी मूल रूपमें धर्मका एक ही स्वरूप है। केवल नाम मात्रसे भिन्न है। प्रकृतिकी सूक्ष्मातिसूक्ष्म इकाईसे लेकर ब्रह्मके विराट स्वरूप तक धर्मका सम्बध व आधिपत्य है। धर्मके अभावमें जीवनका पूर्ण विराम है। सत्यधर्म पर आधारित जीवन विश्व मंगलदायक शांतिका शाश्वत धाम है। वास्तवमें अनन्त यात्राकी विश्व व्यापिनी, ऊर्ध्ववाहिनी शक्तिका स्रोत ही जीवनका शाश्वत धर्म है। जीव जीवनरसकी अमीमय मधुर धारामें तभी प्रभावित होता है जब धर्मका सम्बन्ध उसके साथ होता है।

सत्य अचल, अभेद, अविकल्प अविनाशी तत्त्व है। सत्यकी अविरल धारामें निवासिनी आत्मा ही अभय रहकर अभयदान कर सकती है। मन, कर्म एवं वचनसे मानव जब सत्यका आचरण करता है तो उसे अपरिमेय शान्ति मिलती है। जीवनमें समरसता प्रदान करनेके लिए सत्यके साथ हमारा मधुर रसप्रद सम्बन्ध होना अनिवार्य ही नहीं अति आवश्यक भी है।

लौकिक जीवनमें व्यवहारका ऊँचा स्थान है। मानव समाजमें व्यवहारकी विविधताके कारण कभी-कभी कटुता भी आ जाती है। दैनंदिन व्यवहारमें आई कटुताका निराकरण कर व्यवहारका समय-समय पर मूल्यांकन करने पर

मानव अभय बन सकता है। यदि ऐसे कार्यमें व्यक्तिकी ढुल–मूल नीति रही तो वह कभी भी अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकता और न ही परमात्माका साक्षात्कार। व्यक्ति भीतर और बाहरसे जब तक निर्मल नहीं होता तब तक वह पूर्ण मानव नहीं बन सकता और न ही उसके जीवनमें जीवनका संगीत लहलहाता है। अपने आराध्य इष्टकी प्राप्तिके लिए मन, वचन एवं कर्म सभीमें पूर्ण पवित्रताकी अति आवश्यकता है। ऐसे ही पवित्र आत्मके हृदय मंदिरमें एक पलके लिए भी परमात्मा अलग नहीं होते,

जैसा बाहेर होत हैं, जो होवे ऐसा दिल।
तो अधखिन पिउ न्यारा नहीं, माहें रहे हिल मिल ॥

(तारतम वाणी)

मानव स्वभावसे दयालु एवं महान तो है परन्तु वह उसकी कल–कल करती हुई मस्ती भरी जवानीमें अति उन्मादके साथ कभी–कभी निंदनीय, अवांछनीय, पैशाचिक कार्य करने लग जाता है। ऐसे अशुभ कार्यके लिए प्रोत्साहित करनेवाली आत्मघाती परिस्थितियाँ एवं पूर्वजन्म अथवा इस जन्मके कुसंस्कार इसमें जिम्मेदार होते हैं। लेकिन सोच सकारात्मक रखने पर कठिनसे कठिन परिस्थितियोंसे भी मनुष्य बाहर आ सकता है। कष्टदायी कठोर आचरणसे मुक्त होकर वह जीवनरूपी अधखिली कलीका पूर्ण विकास कर परब्रह्म परमाात्माके सनातन सुखका अनुभव कर सकता है।

वैश्विक धर्म सहित्यिक सन्दर्भमें श्री कृष्ण प्रणामी धर्मका आदर्श उच्चस्तरीय है। वह मानव जीवनके मानदण्ड पर आधारित सृष्टाकी उत्कृष्ट देन है। प्रणामी धर्म व्यष्टि एवं समष्टि गत चेतनाका शुभ मंगल पथ दायक बनकर जीवन बहारकी निर्मल धाराको प्रवाहित करनेमें अपना विशिष्ट गौरवमय स्थान रखता हुआ विश्व शान्ति एवं मंगलकी कामना करता है। निम्न सन्दर्भमें प्रणामी धर्मकी सूक्ष्म भावना छीपी हुई है। जीवन शरीर एवं प्राणका संगम भी है। सार्वभौमिक सत्यका जागरण मंत्र है। धर्म मानव जीवनका ध्रुवतारा है। व्यवहार मानव शरीर एवं आत्माका अभेद्य कवच है। सत्त्य एवं धर्मको केन्द्रमें रखकर व्यवहार करनेवाला व्यक्ति जीवनमें हारता नहीं है। उसकी भावी मंजिल मंगलमय धवल शांतिका धाम है। लहलहाते हुए जीवन बहारमें

आत्म तरंगित संगीतके साथ जीवन पथ पर फूँक–फूँक कर पद संचालन करने वाला व्यक्ति कभी भी निराशाके घेरेमें नहीं आता । आशा एवं विश्वासके असंख्य दीपोंको जलाते हुए असंख्य प्राणियोंका मार्ग दर्शन करते हुए जीवन पथ पर आगे ही बढ़ता रहता है। जब तक मानव दहकती हुई विषय वासनाकी ज्वालासे मुक्त नहीं होता । तब तक वह ब्रह्मानन्द रसपानसे वञ्चित रहता है । मोहपाशसे मुक्त होकर ही मानव कदम पर कदम आगे बढ़ाते हुए जीवनकी सर्व व्यापिनी प्रज्ञा शक्तिको आत्मासात् कर आनन्दवृत्तिमें अक्षरातीत श्री कृष्णका साक्षात्कार करता है । ऐसे ही सजग, पवित्र एवं उत्साही आत्मा ही मनकी सारी तमन्नाओंको पूर्ण कर हँसते हुए अपने मूल परमधाम एवं परम ब्रह्मके सम्मुख जागृत हो जाता है । जहाँ कण–कणमें आनन्द ही आनन्दकी बहार है वहीं आत्मवृत्तिका विलास है ।

इतही बैठे घर जागे धाम, पूर्ण मनोरथ हुए सब काम ॥
धनी महामत हँस ताली दे, साथ उठा हँसता सुख ले ॥

(तारतम वाणी)

रजत जयन्ती समारोह

श्री प्रणामी हाईस्कूल, जामनगरका '**रजत जयन्ती महोत्सव**' आगामी अप्रैल महीनामें मनाया जा रहा है । इस अवसर पर भूतपूर्व एवं वर्तमान विद्यार्थियोंके लिए विशेष कार्यक्रमका आयोजन किया गया है ।

प्रणामी हाईस्कूलमें अध्ययन किए हुए सभी विद्यार्थी कृपया **www.pranamischool.net** पर अपना रजिष्ट्रेशन करवा ले । अथवा **pranamihighschool@gmail.com** पर **Email** करें ।

आप सभीको विदित है कि स्कूलमें वर्तमान पूर्वप्राथमिकसे लेकर उच्चतर माध्यमिक पर्यन्त १५०० विद्यार्थी अध्ययन करते हैं और ३०० विद्यार्थी श्री निजानन्द गुरुकुलमें रहते हैं ।

सम्पर्क : श्री प्रणामी हाईस्कूल (०२८८) २५६२९३०

महामति प्राणनाथके प्रबल प्रतापी शिष्य महाराजा छत्रसाल

गोविन्द प्रसाद चतुर्वेदी (भिवानी-हरियाणा)

हिन्दू धर्म ध्वजा धारक परम तेजस्वी पन्ना राज्यके चक्रवर्ती शूरवीर महाराजा छत्रसालका जन्म विक्रमी सम्वत १७०६ ज्येष्ठ शुक्ल तृतीयाको मुगलोंकी केन्द्रीय सत्तासे विद्रोह करके बुन्देलखण्डके वनाच्छादित पहाड़ी मोर पहाड़ीमें आश्रय लिये महेबाके जागीरदार वीर राजा चम्पतरायकी सहधर्मिणी रानी लाड़कुंअर(सारंधा)से हुआ । मुगल सेना तथा मुगलोंके खिदमतगार धंधेरोंसे चारों ओरसे घिरे बुन्देला वीर चम्पतराय तथा उनकी रानी लाड़कुंअरने यहीं मोर पहाड़ी पर विपन्न स्थितिमें सिंह शावक समान तेजस्वी वीर बालक छत्रसालको जन्म देनेके बाद निरन्तर एक स्थानसे दूसरे स्थान तक आश्रयके लिए प्रस्थान कर जीवन संघर्ष किया । जिस धर्मांध क्रूर मुगल शासक औंरगजेबने अपने ही भाई दारा शिकोहके दक्षिण अभियानसे लौटते हुए पर आक्रमणके लिए जाते समय चम्बल नदी पार करनेमें वीर चम्पतरायने मददकी थी उसी मददगारके खूनका प्यासा होकर औरंगजेबने उन्हें पूरे परिवार सहित मरवानेका फर्मान अपने सिपहसालारोंको दे दिया । परिणाम स्वरूप मुगलोंके खुशामदीद बुन्देले तथा धंधेरे वीर चम्पतरायके प्राणोंके प्यासे हो गए । उस कठिन समयमें वीर चम्पतरायका पहला पुत्र सारवाहन तो मुगल सिपहसालार बाकी खाँके साथ युद्धमें वीर गतिको प्राप्त कर गया । बाकि तीन पुत्रोंको वीर चम्पतरायने अपने सालेके पास छोड़ दिया । धंधेरों तथा मुगल योद्धाओंसे लड़ते हुए घायल होने पर वीर चम्पतराय तथा उसकी रानी सारंधाने जीवित शत्रुओंके हाथ न पड़ने की दृष्टिसे कटारसे अपना हृदय वेध कर खुद ही आत्मोर्संग कर लिया । आत्मबलिदानी चम्पतरायका सिर काट कर धंधेरोंने मुगल सम्राट औरंगजेबको पेश करके जागीरें प्राप्त की ।

छत्रसाल जन्मसे ही लम्बी भुजाओं, चौड़ी छाती, विशाल नयन, उदार ह्रदय, मृदुभाषी, सत्य एवं वचनके प्रति दृढ़ आस्थावान ओजस्वी बालक थे। उनके दैवीय प्रभावान व्यक्तित्वसे आम जनता सहज ही प्रभावित हो जाती थी। उन्होंने अपने मामाके यहाँ रहकर अपने दोनों भाइयों सहित तीर, नेजा, भाला, तलवार व बन्दूक सहित सभी हथियार चलाना, घुड़सवारी, शिकार व मल्लयुद्ध अच्छी तरह सीखे। शस्त्र ज्ञानके अलावा हिन्दवी और संस्कृत भाषा भी उन्होंने पढ़ी। तेरह वर्षकी बाल्य अवस्थामें ही उनमें कुशल सेना नायकके गुण आ गए, परन्तु धन और जनके अभावमें वे कुछ न कर सके। अठारह वर्षकी आयुमें उनका विवाह सुयोग्य वीरांगना देवकुंअरके साथ हो गया था। छत्रसालको खाली बैठना नहीं सुहाता था इसलिए मुगलोंकी सैन्यकला व युद्ध नीतिको सीखनेके लिए जयपुरके राजा जयसिंहके पास गए। राजा जयसिंहकी सिफारिश पर औंरगजेबने चम्पतरायके पुत्र छत्रसालको वशमें रखनेकी नीयतसे मनसब देकर राजा जयसिंहके नेतृत्वमें उन्हें दक्षिण भारतके अभियानमें भेजा जहाँ उन्होंने लौहगढ़के दुर्गम और मजबूत किलेको जीतनेमें जानकी बाजी लगा दी। गम्भीर रूपसे घायल अवस्थामें उनके सैनिक उन्हें युद्ध भूमिसे लेकर आये परन्तु स्वस्थ होने पर उन्हें अपनी इस वीरताका कोई पुरस्कार या सम्मान ओहदा नहीं मिला जिससे क्षुब्ध होकर वे शाही सेनाको छोड़कर बुन्देलखण्डमें लौट आए। उन्होंने मुगलोंके विरूद्ध लड़नेवाले वीर शिवाजीकी मदद करनेके लिए उनकी सेनामें भर्ती होना चाहा परन्तु शिवाजीने उन्हें स्वतंत्र राज्य स्थापित करनेकी सलाह देकर परस्पर सहयोगका वचन दिया और उनका यथोचित सम्मान भी किया। शिवाजीके सिंहगढ़ दुर्गमें अतिथिके रूपमें रहते हुए छत्रसालको शिवाजीके आध्यात्मिक प्रेरणा व नैतिक मनोबल प्रदान करनेवाले समर्थ गुरु रामदासका चित्र देखकर उन्हें भी अपने लिए उपयुक्त आध्यात्मिक व नैतिक संरक्षण की आवश्यकता महसूस हुई। तीन-चार साल तक छत्रसाल वनोंमें भटकते तथा मुगल सैनिक टुकड़ियों तथा छोटे छोटे मुगल जागीरदारोंसे लड़ते हुए बीते, उनके साथ बहुत कम

सैनिक थे परन्तु उनका मनोबल बहुत ऊँचा था। उन्होंने सर्वप्रथम अपने पिताके हत्यारे घंघेरों पर आक्रमण कर उनका दुर्ग हथिया लिया। इस अभियानमें मुगल सल्तनतकी शोषण नीतिका शिकार होकर प्रायश्चितकी अग्निमें जल रहे पठान सरदार बाकी खांने मुगल सेना छोड़कर अपनी छोटीसी टुकड़ीके साथ छत्रसालका साथ दिया और आजीवन उनका साथ निभानेका वचन दिया। उस दौरान छत्रसालकी माता लाड़कुंअरके विश्वस्त भाई समान तेली सरदारने भी अपनी पूरी जमातके साथ छत्रसालकी सेनामें भर्ती होकर आजीवन उनके सैन्य अभियानोंमें सहयोग दिया तथा लाड़कुंअर द्वारा सौंपे गए समस्त आभूषण छत्रसालको सौंप दिए।

धंधेरों पर विजय प्राप्त करनेपर धंधेरा शाशकने अपनी बेटीका डोला देकर(छत्रसालके साथ विवाह करके) मित्रताका हाथ बढ़ाया। इसके अलावा छत्रसालने अनेक बड़े-बड़े घमण्डी व शोषक जागीरदारों पर आक्रमण करके उन्हें लूटा तथा मुगल शाही फौजोंकी रसद व युद्ध सामग्री लूटी इससे बुन्देलखण्डके मुगल पदाधिकारियोंमें आतंक छा गया। घमौनीके फौजदार खालिकने इनका विरोध किया तो उसे भी परास्त कर लूट लिया। ओरछाके राजा सुजान सिंहने छत्रसालको बुलाकर अपने हाथोंसे उनकी कमरमें तलवार बांध कर विजयी रहनेका आशीर्वाद दिया। परन्तु दतियाके राजा शुभकरणसे मुगलोंके विरूद्ध सैन्य अभियानके लिए मदद मांगने पर उन्होंने छत्रसालको मुगलोंकी शक्तिका भय दिखाकर उनकी मदद करनेसे इन्कार कर दिया।

औरंगजेबने अपनी मजहबी धर्मांधताके वशीभूत होकर बुन्देलखण्डके सभी मन्दिर गिरा कर वहाँ मस्जिदें बनानेके आदेशके साथ एक बड़ी शाही सेना फिदाई खांके नेतृत्वमें भेजी जिससे अपने मुठ्ठीभर जाँबाजा सैनिकोंके साथ छत्रसाल भिड़ गए और जहाँ भी मुगल सेना जाती उसे संहार कर भगा देते। भूख प्यासकी परवाह किए बगैर निरन्तर बीस-बीस घन्टे फिदाई खां की सेनासे छत्रसालके सिरफिरे सैनिक लड़ते रहते और अनन्तः उसे बुन्देलखण्डसे खदेड़कर ही दम लिया। इससे जनतामें छत्रसाल और

उसकी सेनाकी हिन्दू धर्म रक्षक वीर योद्धके रूपमें छविमें निखार आया और वे जन नायक बनकर उभरे । उन्हें अब पूरी तरह जन समर्थन मिलने लगा था । छत्रसालकी सेना, धन, राज्यके व क्षेत्रफलमें काफी वृद्धि हुई । औरंगाबादके बलदाऊको भी परास्त कर छत्रसालने उन्हें भी अपने साथ मिला लिया । इसी तरह बिजौलीके जागीरदार रत्नसिंहको परास्त कर उन्हें भी अपने अधीन कर लिया । छत्रसालकी बढ़ती शक्तिसे घबराकर औरंगजेबने हिम्मत खाँ, पहाड़सिंह गौंड़ तथा अमानुल्ला खाँ जैसे विकट योद्ध सेनापतियोंके अधीन विशाल सेना देकर छत्रसालको समाप्त करनेके लिए भेजा । इस युद्धमें छत्रसाल और अंगद दोनों भाई गम्भीर रूपसे घायल हो गए और इस स्थितिमें हतोत्साहित छत्रसालकी सेना दोनों वीरोंको लेकर पन्ना चली गई । पन्नामें सेवा उपचारसे स्वस्थ होने पर छत्रसालने फिरसे अपनी आक्रामक गतिविधियोंको विस्तार देना प्रारम्भ कर दिया । इन दिनों छत्रसालने अपनी गतिविधियोंका केन्द्र मऊको बनाया हुआ था तथा झाँसी तक अपने राज्यका विस्तार कर लिया था । पर सैन्य अभियानोंके लिए शस्त्र तथा सैनिकोंके वेतनके लिए धनकी कमी आड़े आ रही थी उसी दौरान छत्रसालके भतीजे गढ़ाके देवकरण दीवानने पन्ना नरेश छत्रसालको मऊ संदेश भिजवाया कि एक तेजस्वी महान सन्त रामनगरमें अपने शिष्य मंडली व पांच हजार साधुओंके साथ ठहरे हुए हैं और आपसे सत्संग करना चाहते हैं । छत्रसालने महामति प्राणनाथको मुगल अफगान खाँ द्वारा इस क्षेत्रको अपनी सेनासे घेरे रखनेका सन्देश भेज कर अकेले द्रोणगिरीमें आकर मिलनेका सन्देश दिया । छत्रसालकी महामति प्राणनाथजीसे द्रोणगिरीमें मुलाकात हुई । महामति प्राणनाथजी अपनी शिष्य मण्डली तथा साधु समाजके साथ वहीं आ विराजे थे । छत्रसाल शिकारीके वेशमें वहाँ गए थे । महामति प्राणनाथजीने उन्हें अपने निकट आसन देकर बिठाया और शुभ वचनोंसे उनका आदर किया । बादमें छत्रसाल अपनी रानी और बलदीवानको साथ लेकर सेना सहित फिरसे महामति प्राणनाथजीसे मिले । उसी समय अफगान खाँने अपनी सेनाके साथ वहाँ घेरा डाल दिया, यह जानकर जब छत्रसाल

अफगन खाँसे मुकाबला करनेके लिए उठने लगे तो महामति प्राणनाथजीने छत्रसालको वीर वस्त्र धारण करवाकर अपने हाथोंसे तलवार उनकी कमरमें बांधी और कहा यह तलवार विजयाभिनन्द बुद्ध निश्कलंक प्रभुकी है इसलिये तू सदा अजेय रहेगा।

तत् छिन श्रीजू आपनी, असि कटि दई बँधाई ।
शिरोपाव पहिराई कै, दीन्ही आशिष धाई ॥
महाराजा अधिपति भये, महाराजा छत्रसाल ।
राजनमें राजा भये, असुरन केरे काल ॥

अपने एक हजार योद्धाओंके साथ छत्रसालने अफगन खाँके पाँच हजार पैदल तथा तीन हजार घुड़सवार सेनाका मुकाबला किया और इस युद्धमें छत्रसाल विजयी हुए। इसके उपरान्त छत्रसाल व उनकी मझली रानीने मऊमें महामति प्राणनाथजीसे तारतम मन्त्र धारण कर उन्हें अपना गुरु बनाया। सम्वत् १७४० के वैशाख माहमें महामति प्राणनाथजी अपने दल सहित पन्ना कूच कर गये। कुछ समय तक सेना सहित मऊमें रहनेके बाद छत्रसाल भी पन्ना आ गए और महामति प्राणनाथजी तथा श्री बाईजीराजको पालकीमें बिठाकर छत्रसाल व देवकरनने पालकीके आगे कंधा लगाकर तथा पालकीके पीछे अन्य विशिष्टजनोंने कंधा लगाकर महलों तक लाए। वहाँ द्वार पर पालकी उतारकर छत्रसालने अपनी पगड़ीको पलक पांवडेमें बिछाया तथा मंझली रानीने भी अपनी साड़ीसे पलक पांवड़े बिछाकर श्रीजी(महामति प्राणनाथजी) तथा श्री बाईजी राजको साथ लाकर अपने सिंहासन पर बैठाया और उनको सुन्दर वस्त्राभूषणसे सज्जित कर चरण वन्दन पूजन किया एवं पन्नाके राज सिंहासन पर बैठाया और पन्नाका राज सिंहासन उन्हें सौंप दिया। अपने इस आदरमानके बदले महामति प्राणनाथजीने समस्त राज समाज व प्रजाके समक्ष छत्रसालको राजतिलक करके सरोपा भेंट किया तथा कमरमें तलवार बांध कर छत्र धारण करवाय और महाराजाधिराजकी उपाधिसे विभूषित किया। उन्होंने छत्रसालको धर्मध्वजा प्रदान कर समस्त प्रजासे समानताका व्यवहार करते हुए प्रजा व धर्म रक्षाका वचन लिया और अपना दीवान बनाया।

छत्रसाल बहुत गुणी, धीर-वीर गम्भीर प्रजापालक धर्मरक्षक व साहित्य प्रेमी राजा थे। युद्ध सम्बन्धी खर्चोंकी अधिकताके कारण उनको जिस आर्थिक कठिनाईका सामना करना पड़ रहा था उस समस्यासे मुक्ति दिलानेके लिए महामति प्राणनाथजीने उन्हें वरदान देकर पन्नाकी बंजर धरतीको हीरोंकी खानमें बदल दिया था, इन खदानोंसे प्राप्त बहुमूल्य हीरोंको बेचकर सेनाके लिए आवश्यक धन जुटा लिया गया था। श्रीजीके आशीर्वादसे छत्रसालको फिर कभी भी अपनी जीवन कालमे पराजयका मुंह नहीं देखना पड़ा। ये पंक्तियाँ इस बातकी साक्षी हैं।

छत्ता तेरे राज में, धक् धक् धरती होय।
जित जित घोड़ा मुख फिरै, तित तित फत्तै होय ॥

छत्रसालने अपने जीवनकालमें छोटी बड़ी मिलाकर ७० लड़ाइयाँ लड़ी और अपने राज्यका खूब विस्तार किया। सबसे पहले अपने मुठ्ठीभर साथियोंके साथ गढ़ा कोटा पर आक्रमण करके उस किलेको हथिया कर अपने शक्ति बढ़ाई। बादमें मऊ(रानीपुर), झांसी, भेलसा(विदिशा), सिरौंज, दैलवारा, जालौन, धमौनी, नरवर, ग्वालियर, सागर, दमोह, पन्ना तक अपने राज्यका विस्तार किया। उन्होंने मालवा, इलाहाबाद और आगराके मुगल सूबेदारोंको युद्धोंमें खूब छकाया और उनको तथा दिल्लीकी सल्तनतको बहुत परेशान किया। औरंगजेबके उपरोक्त तीन सूबेदारोंसे महाराजा छत्रसाल चौथ वसूलते थे। छत्रसालके मराठोंके अलावा राजस्थानकी बूंदी रियासतके राजा हाड़ा दुर्जन सिंह तथा दुर्गादास राठौरसे भी बहुत अच्छे मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो गए थे। छत्रसाल वीर, दूरदर्शी तथा प्रजापालक राजा थे। उन्होंने उदारताका सदैव परिचय दिया। अपनी १६ वर्षकी आयुसे ८० वर्षकी आयु तक निरन्तर युद्धोंमें उलझे रहने पर भी वे सदैव अजेय योद्धाकी तरह निरन्तर अपने स्वाभिमानको बनाए रख सके। छत्रसालके जीवनका सबसे अन्तिम युद्ध धूर्त और पराक्रमी मुगल सेनापति मुहम्मद शाह बंगशके साथ हुआ। उस समय उनके दोनों युवराज हृदयशाह और जगतराज छोटे थे और आपसमें फूट भी थी। मोहम्मद बंगशकी सेना बहुत

बड़ी थी। इस विशाल मुगल सेनासे युद्धकी कठिन परिस्थितिमें छत्रसालने सौ दोहोंका एक पत्र पेशवा बाजीरावके नाम देकर अपने पुत्र हृदयशाहको भेजा तथा दूसरे पुत्र जगतराजको सेनाके साथ युद्ध भूमिमें भेजा। पत्रका एक दोहा उल्लेखनीय है,

ज्यों बीती गजरात पै, सो बीती अब आय ।
बाजी जात बुन्देल की, राखो बाजी राय ।।

बाजीराव उस समय इन्दौरमें थे। पत्र पाकर उन्होंने हृदयशाहको हृदयसे लगा लिया अपने भाई चिमनाजी अप्पा तथा अपनी एक लाख सैनिकोंके विशाल लश्करको हृदयशाहके साथ भेज दिया और खुद भी मल्हार राव होल्कर तथा महावत समनखाँके साथ सेना लेकर छत्रसालकी सहायताके लिए जैतपुरके किलेके समीप तक जा पहुँचे। बाजीराव छत्रसालको आदरसे कक्काजू सम्बोधित करते थे। बाजीरावको छत्रसाल भी अपना तीसरा पुत्र मानते थे इसलिए छत्रसालने अपने राज्यका एक तिहाई भाग झांसीकी जागीर बाजीरावको दे दी जिसकी आय उस समय ३९ लाख रूपये थी तथा अपनी आश्रित सुन्दरी मस्तानी बाई भी भेंटकी। छत्रसालने अपने दोनों पुत्रोंको बाजीरावको भाई माननेका आदेश दिया।

छत्रसाल एक धर्म परायण राजा थे। वे सभी धर्मों व मतावलम्बियोंका समान रूपसे आदर करते थे। उन्होंने अपने राज्यमें आश्रय लेनेवाले सभी कवियों और कलाकारोंको खूब सम्मानित किया। वे खुद भी एक अच्छे कवि थे उन्होंने छत्रविलास, नीतिविलास मंजरी, राज विनोद, गीत संग्रह तथा छत्रसाल जू को काव्य नामक काव्य संग्रह तथा साहित्य रचनाएँ की थी जो उनकी काव्य प्रतिभाको दर्शाती हैं।

श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके प्रति समर्पित महाराजा छत्रसालने अपने गुरु महामति प्राणनाथजी व श्री बाइजीराज तथा उनके साथ आए पांच हजार साधु समाजकी अपने पास रखकर ग्यारह वर्ष तक खूब सेवा की इससे प्रसन्न होकर श्रीजीने उन्हें ब्रह्म ज्ञान कराया। छत्रसालने अपने महलके

स्थानपर चोपड़ा मन्दिर बनवाया तथा श्री राजजीकी उसमें पधरावनी की तथा गुम्मट व बंगला मन्दिर बनवाकर गुरु इच्छा पूरीकी और पूरे भारत व नेपालमें प्रणामी धर्म प्रचारकोंको भेजा । वे श्री राजजी और अपने गुरु महामति प्राणनाथजीकी नित्य प्रति सेवापूजा किया करते थे । वृत्तान्त मुक्तावलीमें उनकी गुरुभक्तिके बारेमें लिखा है ।

छत्रसाल सेवा करी, निज परना में आइ ।
भयो न आगे होइगो, समझौ हिये मिलाई ॥

हिन्दू धर्मके रक्षक प्रबल तेजस्वी गुरुभक्त वीर महाराजा छत्रसालका वि.सं. १७८८(२० दिसम्बर सन् १७३१ ई.) में परमधाम गमन हुआ । कवि व्रजभूषण महाराजा छत्रसालके शिष्य थे अतः छत्रसालके आदेशानुसार व्रजभूषणने ही कवित्तमय वृत्तान्त मुक्तावली ग्रन्थकी रचना की जो महामतिजीके जीवन दर्शनसे सम्बन्धित एक ऐतिहासिक ग्रन्थ है ।

---

१ जनवरी परम पूज्य आचार्य महाराजश्रीका प्राकट्य दिन

अन्तर्राष्ट्रिय कैलेन्डरका प्रथम दिन अर्थात् १ जनवरी सुन्दरसाथके लिए अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह दिन श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके १४ वें धर्माचार्य जगद्गुरु आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराजका प्राकट्य दिन है । प्रतिवर्ष श्री ५ नवतनपुरी धाममें १ जनवरीके दिन परम पूज्य आचार्य महाराजश्रीके प्राकट्यका उत्सव दिव्य और भव्यरूपसे मनाया जाता है । इस अवसर पर पूरे गुजरातके सुन्दरसाथके साथ साथ देश विदेशके हजारों सुन्दरसाथकी उपस्थिति होती है । इस वर्ष भी प्रतिवर्षानुसार यह पावन उत्सव परम पूज्य आचार्य महाराजश्रीके सान्निध्यमें भव्य रूपसे मना रहे हैं । अतः परम पूज्य आचार्य महाराजश्रीके पावन चरणोंमें अपनी शुभकामना एवं सद्भावना व्यक्त करते हुए जीवनको धन्य बनाने हेतु सभी सुन्दरसाथको हार्दिक आमंत्रण करते हैं । – सन्तसभा

भक्ति और लघुता

धामवासी श्री हरिप्रसाद शर्मा शास्त्री, काव्यतीर्थ
श्री कृष्ण प्रणामी धर्म पत्रिकाके पूर्व सम्पादक

भक्ति शब्द इतना व्यापक और साक्षेप हो गया है कि आज कल उसका स्वरूप समझानाके लिए एक प्रकारसे आलोचनाका पात्र बनना पड़ता है। इस विकट समस्याको सुलझानेके लिए गवेषणापूर्ण विचारकी आवश्यकता है।

किसी भी गहन विषयको जब तक तत्त्वतः न समझा जाय तब तक उस विषयमें अपना अनुमान ढालना गौरव नहीं अपितु तर्कवाद मात्र कहा जायेगा।

यदि अपनेको भक्त-सेवक बनना हो तो सेवा-भक्तिकी तरफ झुकना पड़ेगा। एक तो सेव्य वस्तु परमात्मा है और दूसरी उनके प्रति अविरोधी भाव अर्थात् परब्रह्म परमात्माके प्रति अविचल भाव और उनके विरोधी भावके साथ सम्पूर्ण असहकार। ये दोनों भावोंको दृढ़तापूर्वक पालन करना पड़ेगा।

भक्ति तो तब ही संभव कही जा सकती है, जब अपने अन्दर लघुताकी भावना जागृत हो उठेगी। क्योंकि, **लघुतासे प्रभुता मिले, प्रभुतासे प्रभु दूर।**

अहा हा ! कितना सुन्दर और सार गर्भित उपदेश है। लघुता धारण करके सभीके चरणमें रगड़ी हुई धूलि भी आकाशमें चढ़ जाती है। परन्तु अपनेको 'पण्डितंमन्यमानाः' पत्थर जमीनमें ही पड़ पड़ कर धक्का खाया करते हैं। यदि उनको कोई आकाशकी ओर भी फेंक दे, तो भी वे नीचे ही आ पडेंगे।

गुरुता कहो या गौरव अथवा प्रभुता सभीका अर्थ लगभग एक ही निकलता है। संयोगवश किसी प्रयत्नसे ऊंचे चढ़ भी ले, लेकिन वह अपनी गुरुताके कारण पतित हुए बिना नहीं रहेगा।

महामति श्री प्राणनाथजीके शब्दोंमें देखिये,

ज्यों ज्यों गरीबी लीजे साथमें, त्यों त्यों पाइए धनीको मान।
इत जागेका फल एही है, चेत लीजो चतुर सुजान॥

अर्थात् जो तुम्हें अक्षरातीत परब्रह्म परमात्माकी मान प्रसन्नता प्राप्त करनी हो तो संसारमें गरीबी धारण करो। और भी, **रब्ब ना रखे किसीका गुमान, वह तो गरीबों पर महेरबान।**

अर्थात् जब हमने गरीबी(लघुता) धारण की कि तुरन्त हमारी भक्ति पूर्ण हो गई इसीको प्रेमलक्षणा भक्ति कहा गया है। इसीके द्वारा परमात्माकी प्राप्ति होती है। इस नश्वर जगतसे जागृत होनेका-ज्ञानी बननेका फल यही है कि गरीबीसे सभीको प्रसन्न रखना और शुद्ध प्रेम-भक्तिके द्वारा परमात्मा प्राप्त करना। मानवके अन्तःकरणमें जब तक गरीबीपना नहीं आयेगा तब तक उसकी सारी क्रियायें असफल ही रहेंगी।

भक्तिके अनेक भेद और रूपान्तर देखनेमें आते हैं। शास्त्रोंमें भक्तिका वर्णन अनेक प्रकारसे मिलता हैं। फिर भी लघुताके बिना भक्ति देखनेमें आती नहीं। लघुता रहित बनकर भक्ति करनेवाले आज दिन तक देखने या सुननेमें आये नहीं हैं। जिस प्रकार शरीर धारण किये बिना प्राण नहीं रहते हैं उसी प्रकार लघुता ग्रहण किये बिना भक्ति रह ही नहीं सकती है।

अब सर्वप्रथम श्रवण भक्तिको देख लें। जहाँ तक लघुता नहीं आती, वहाँ तक दूसरेका ज्ञानोपदेश अथवा दूसरेके शब्दोंको बड़ा माननेके लिये कैसे तैयार हो सकते हैं। और अपने आपको तुच्छ अल्पज्ञ समझे बिना श्रद्धा उत्पन्न होगी ही नहीं और श्रद्धाके बिना श्रवण भक्तिकी सिद्धि किसी भी प्रकार सम्भव नहीं हो सकती।

कीर्तन भक्ति भी लघुताका ही स्वरूप है। अर्चन और वन्दनमें भी सम्पूर्ण सामग्री लघुतासे भरपूर है। इस नश्वर शरीरको नम्र बनाये बिना और प्रभुके चरणकी रज बने बिना वन्दन कैसे हो सकता है।

दास्य भावमें स्वरूप और स्वभाव दोनोंसे युक्त लघुता होनी चाहिये और स्मरण भी तन्मय बने बिना नहीं हो सकता। सख्य भक्तिमें लघुताके वास्ते सम्पूर्ण परित्याग करना पड़ता है।

अब रही आत्म निवेदन भक्ति। उसका साधन भी लघुतासे ही सिद्ध हो सकता है और परा प्रेमलक्षणाका स्वरूप तो लघुताके बिना प्राप्त होना असंभव है और जहाँ तक **'सर्वं त्यक्त्वा हरिं भजेत्'** का अवलम्बन न हो वहाँ तक प्रेम लक्षणा भक्ति पुष्ट नहीं हो सकेगी। सर्वको परित्याग किये बिना परब्रह्म परमात्माकी शरण ग्रहण न हो सकेगी।

जहाँ तक अपने आपको अनाथ अकिञ्चन और अशरण आदि तुच्छ माननेमें नहीं आता वहाँ तक परमात्मा प्राप्त करनेका अधिकारी कदापि नहीं हो सकता। इससे यह सिद्ध हुआ कि, सेवार्थक-भज् धातुसे बना हुआ भक्ति शब्द लघुताके बिना अपूर्ण है।

भक्तिका कलेवर लघुता और उसका प्राण अनन्यता है। जब तक हृदयमें लघुता और अनन्यताका भाव आविर्भाव नहीं होता तब तक व्यक्तिकी भक्ति अनपायिनी परा भक्तिके दरवाजेमें पहुँच कैसे सकेगी ? वहाँ तो ध्याता-ध्येय और ज्ञाता-ज्ञेयके खटपटसे मुक्त होकर सुख, दुःखादि द्वन्द्वसे दूर हो कर ही पहुँचा जा सकता है। क्योंकि,

निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतां, को विधिः को निषेधः।

अर्थात् पूर्णब्रह्म परमात्माके प्रति समर्पित भक्तके संसारमें रहनेवाले भक्तिके लिये विधि और निषेधकी क्या जरूरत है ? जब उसका अस्तित्व प्रभु सत्तामें चला गया तब तो कार्य करना न करना परमात्माके आधीन हो जाता है। इसमें कारण यह है कि भक्त तो अपने लिए कुछ भी करता नहीं और किसीको कुछ कहता भी नहीं **'रस मगन भई सो क्या गावे'**। वह परमात्मा स्वरूपमें मगन हो चुका होता है। जैसे कि समुद्रमें पड़ी हुई मिश्रीकी तरह वह पिघलकर मिल गया तब सारी क्रियायें करे तो किसके लिये करे ? अब तो उसका अस्तित्व भी मिट गया उसने तो अपने आप

अपनापन और अपना सर्वस्व परमात्माके ऊपर समर्पित कर दिया और स्वयं भी परमात्मामें समा गया । अब बाकी क्या रहा ?

धर्म प्रेमी सुन्दरसाथजी ! उपर्युक्त विवेचनसे आप लोग इतना तो जरूर समझ गये होंगे कि सेवा कहें या भक्ति, परन्तु उसके लिए लघुता और अनन्यता तो अनिवार्य है। जब तक इन दोनों वस्तुओंका अभाव रहेगा तब तक भक्तिमें भी अपूर्णता ही समझना चाहिए ।

अतः भक्तिको धारण करनेके लिए प्रत्येक भक्तको अनन्य परा भक्ति और लघुताको सर्व प्रथम धारण करना पड़ेगा ।

कुएंका मेंढक

एक मेंढक सागरकी लहरोंमें बहते हुए एक कुएंमें गिर गया । कुएंमें एक दूसरा मेंढक था उसने नयें मेंढकसे पूछा, मित्र कहाँसे आये हो ? उसने कहा सागरसे आया हूं। कुएंके मेंढ़कने पूछा, सागर क्या चीज है ? वह कैसा होता है ? आदि आदि । क्योंकि उस कुएंके मेंढकने सागरका जिक्र कभी किसीसे सुना नहीं था। उसका जन्म भी कुएंमें हुआ था वही पला बढ़ा सब कुछ। उसने उस कुएंकी दिवारसे बाहरकी दुनियाँ कभी देखी नहीं थी। सागरसे आनेवाले मेंढ़कने सागरके विषयमें बताते हुए कहा मित्र ! सागर बहुत बड़ा होता है। उसकी कोई सीमा नहीं होती है। वहाँ पर हमारे जैसे असंख्य मेंढ़कके साथ-साथ अन्य भी कई जीव जन्तु रहा करते हैं । यह सब बातें सुनकर कुँएके मेंढ़ककी आँखें खुलीकी खुली रह गई। उसने पूछा, सागर बहुत बड़ा है ? मतलब कितना बड़ा ? उसने आधे कुएंमें छलांग लगाई और कहा, इतना बड़ा ? सागरके मेंढ़कने कहा, नहीं नहीं, बहुत बड़ा है। तो उसने पूरी छलांग लगाई। कहा, इतना बड़ा ? फिर सागरके मेढ़ने कहा नहीं भैया यह तो कुछ भी नहीं है, वह अमाप है । अब कुएके मेंढकको संदेह पैदा होने लगा। उसने मनही मन सोचा यह यूं ही फेंक रहा है। सागर नामकी कोई वस्तु ही नहीं होती है।

उसे भरोसा तो नहीं आया, किन्तु फिर भी उसने एक और आखिरी कोशिश की। उसने पूरा चक्कर कुएंका दौड़कर लगाया। कहा, इतना बड़ा ?

सागरके मेंढकने कहा, मैं तुमसे कैसे कहूं ? इस कुएंसे उसका कोई पैमाना नहीं। उसका कोई नाप जोख नहीं हो सकता। तो कुएंके मेंढकने क्रोध करते हुए कहा, झूठकी भी एक सीमा होती है। किसी औरको धोखा देना मुझे नहीं। मैं ऐसा नासमझ नहीं हूँ। तुम किसको मूढ़ बनाने चले हो ? इस कुएंसे बड़ी चीज न कभी सुनी गई थी, न देखी गई। अपने मां-बापसे, अपने पुरखोंसे भी मैंने इससे बड़ी चीजकी कोई बात नहीं सुनी।

ऐसे ही हम भी पीढ़ी दर पीढ़ी कुएंमें रहे हैं। इस कुएंसे बाहर निकल कर देखें तो ज्ञात होगा कि इससे बाहर एक और दुनियाँ है जिसका कोई तोल व मोल नहीं है।

श्री ५ नवतनपुरी धाम गौशालाकी सेवा

एक गायकी सेवा(गौदान) रु. ११०००/ प्रदान करनेवाले सुन्दरसाथजी इस प्रकार हैं :

सुश्री प्रेरणा भावेश आर. ठक्कर, **मुम्बई** ।

श्री विनोदभाई रामजीभाई चांगाणी, **जामनगर** ।

धामवासी प्रेमाबाई रीमाल, **रांगशाली(आसाम)** ।

ह. भक्तलाल रीमाल-**श्री ५ नवतनपुरी धाम** ।

गायोंके लिए घास, चारा, कपासिया, लड्डु दाना एवं अन्य सेवा प्रदान करनेवाले सुन्दरसाथजी इस प्रकार हैं :

रु. ३०००/ धामवासी लाडुबेन गोवर्धनभाई सभाया, **मेटोडा** ।

रु. २७११/ छगनभाई भादाभाई कमाणी, **कालावड** ।

रु. २५०१/ पार्थिव विरज कीर्तिभाई गजेरा, **अमदावाद** ।

रु. २६००/ भीखुभाई कुरजीभाई ठुम्मर, **गुन्दासरा** ।

रु. २५०१/ श्री प्रभुदास पी. पटेल, **मोयद** ।

रु. ५१००/ प्रवीणभाई लाखाभाई सोलंकी, **राजकोट** ।

रु. २५०१/ चन्दनबेन जयन्तीलाल पटेल, **सुरत** ।

रु. २५०१/ श्री बिपीनचन्द्र नरोत्तमदास भावसार(वलसाड), **अमेरिका** ।

रु. १०,०००/ धामवासी जेसाभाई शामजीभाई फलदु, **जामनगर** ।

रु. २०,०००/ धामवासी साकाभाई मगनभाई पटेल, **बावसर** ।

रु. ४०००/ राधाबेन विनोदभाई चांगाणी, **कैलाशनगर** ।

रु. ३३००/ धामवासी मणिबेन गाण्डुभाई सोजित्रा, **जामनगर** ।

रु. ३०००/ हार्दिक वी. भट्ट, **जामनगर** ।

गौदान तथा गौसेवामें घास-चारा आदिकी सेवा प्रदान करनेवाले सभी सुन्दरसाथको श्री राजजीकी असीम कृपा तथा गौमाताके आशीर्वाद प्राप्त हो और आप इसी प्रकारकी सेवायें करते रहें ऐसी शुभकामनाओंके साथ श्री ५ नवतनपुरी धाम तथा पूज्य आचार्य महाराजश्रीकी ओरसे हार्दिक शुभकामनाएँ एवं शुभाशीर्वाद ।

पक्की रसोईकी सेवा

०१)	श्री किशोरभाई अर्जुनभाई भण्डेरी	माण्डासण
०२)	श्री रमाकान्तभाई सिंह	गोरखपुर
०३)	श्री हरदासभाई कानाभाई वसोया	हर्षदपुर
०४)	श्री धरमशीभाई रणछोड़भाई वसोया	हर्षदपुर
०५)	श्री मिहिरकुमार अश्विनभाई ताला	जामवाडी
०६)	श्री सुजयभाई ठक्कर	मुम्बई
०७)	श्री तुलसीभाई काबाभाई अकबरी	ठेबा
०८)	श्री जमनभाई मोहनभाई भण्डेरी	सुरत
०९)	श्री लाखीबेन हरदासभाई खोडभाया	वेकरी
१०)	श्री चन्दनबेन जयन्तीलाल पटेल	सुरत
११)	धा.वा. प्राणजीवनदास नथ्थुभाई जोबनपुत्रा तथा हेमकुवरबेन प्राणजीवनदास जोबनपुत्रा	राजकोट
१२)	श्री अरविन्दभाई नागजीभाई वादी	कालावड

१३) धा.वा रवजीभाई मावजीभाई वागडिया	
तथा जडीबेन रवजीभाई वागडिया	धुडसीया
१४) श्री चिरागभाई ओधवजीभाई राणपरीया	जीवापर
१५) श्री जयन्तीभाई मेघजीभाई सगपरीया	राजकोट
१६) श्री प्रभुदास हरिभाई पटेल	
ह. डाहीबेन प्रभुदास पटेल(सलाल)	बावसर
१७) धा.वा. सांकाभाई मगनभाई पटेल	बावसर
१८) धा.वा. वसन्तबेन प्रागजीभाई पीठडिया	जामनगर
१९) धा.वा. डाहीबेन ठाकरशीभाई रायचुरा	मुम्बई
२०) धा.वा. अजयभाई प्रवीणभाई ठुम्मर	जेसर
२१) ब्रह्मलीन बावाजी श्री लक्ष्मीदासजी महाराज	नवतनपुरी धाम
२२) श्री विष्णुप्रसाद पुजारी	महियारी
२३) श्री हिरेनभाई भीखुभाई अटारा	हर्षदपुर
२४) धा.वा. जेठुभा बनेसंग झाला	राजकोट
२५) श्री रसिकभाई मोहनभाई ताला	राजकोट
२६) श्री आरव नीलेशभाई डोबरीया	सुरत
२७) धा.वा. प्रेमबाई रीमाल	रांगशाली(आसाम)
ह. श्री भक्तलाल रीमाल	
२८) नेपालसे आए हुए तीर्थयात्री सुन्दरसाथ	
ह. श्री नगेन्द्रमणि आचार्य	विराटनगर
२९) धा.वा. बावाभाई भूटाभाई	
तथा धा.वा. उजीबेन बावाभाई रूपारेलीया	गुन्दासरा
३०) श्री जयदीपभाई	मुम्बई
३१) धा.वा. दीवाबेन नाथाभाई पटेल	
ह. श्री शारदाबेन मणिलाल पटेल(सलाल)	पुराल
३२) श्री राधेश्यामजी मूलचन्दभाई कुशवाहा	सागर(म.प्र.)
३३) धा.वा. भोवानभाई मेघजीभाई ताला	छत्तर

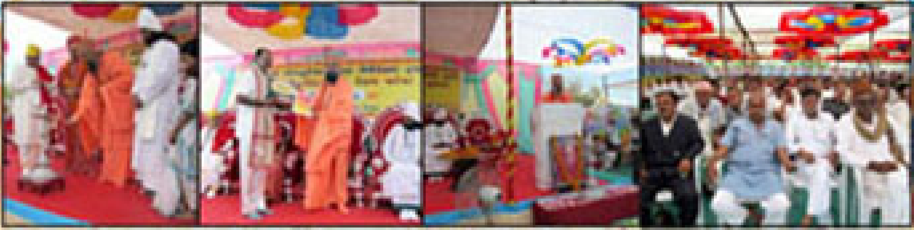

भाग्यलक्ष्मी एज्युकेशन एन्ड चेरिटेबल ट्रस्टके सामाजिक कार्यक्रममें
आशीर्वचन प्रदान करते हुए परम पूज्य आचार्य महाराजश्री ।

पंजाबकी यात्रामें हुई दुर्घटनामें धामगमन हुए सुन्दरसाथकी स्मृतिमें
श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर अंजारमें आयोजित पारायणकी पूर्णाहुति एवं श्रद्धांजलिके
अवसर पर आशीर्वचन प्रदान करते हुए परम पूज्य आचार्य महाराजश्री एवं सज्जन ।

श्री कृष्ण प्रणामी शैक्षणिक स्कूल राजकोटमें आयोजित श्री तारतम सागर त्रिदिवसीय
अखण्ड पारायणकी पूर्णाहुति एवं आशीर्वचन प्रदान करते हुए परम पूज्य आचार्य महाराजश्री ।

प्रेम एकादमी द्वारा आयोजित 'राष्ट्रीय प्रेम डे' के उपलक्ष्यमें
आशीर्वचन प्रदान करते हुए परम पूज्य आचार्य महाराजश्री ।

RNI No. GUJ BIL /2006/18311 Registration No. GJN-1 / 2009-2011

श्री परेशभाई कोराट परिवार द्वारा सांगणवा गांवमें आयोजित पारायणके अवसर पर पूर्णाहुति तथा आशीर्वचन प्रदान करते हुए परम पूज्य आचार्य महाराजश्री ।

गुजरात हाईकोर्टके सिनीयर वकील श्री देवेन्द्रभाई चौहाणके नूतन कार्यालयका उद्घाटन करते हुए परम पूज्य आचार्य महाराजश्री ।

श्री कृष्ण प्रणामी मन्दिर दीवका वार्षिक उत्सव एवं श्री बाईजीराज महाराणी स्मारकके दृश्य ।

PRINTED BOOK

TO :

SHRI KRISHNA PRANAMI DHARMA PATRIKA

SHRI 5 NAVTANPURI DHAM JAMNAGAR - 361 001 (INDIA)